द्वितीय अध्याय

प्रबन्ध पर विविध प्रभाव तथा शंका समाधान

प्रबन्ध पर विविध प्रभाव तथा शंका समाधान

:१: पौराणिक प्रभाव

:क: शिव

वेदों में शिव नाम अज्ञात है, किन्तु उसके स्थान पर लगभग तुलनात्मक समान दूसरा नाम रुद्र मिलता है। वेदों के इस रुद्र से ही महादेव और शिव जैसे नाम का विकास, विस्तार हुआ है। ऋग्वेद में अग्नि के लिए रुद्र शब्द प्रयुक्त है, और मारुतों को उसका पुत्र कहा गया है। अन्य स्थलों में वह अग्नि से पृथक भी है। उसकी प्रशस्ति, जैसे -- गायन का देव, बलिदानी देव, रोगमुक्त कर्ता, सूर्य की तरह प्रतिभावान, सभी देवों में श्रेष्ठ और उत्तम, समृद्धि दाता, भेड़-घोड़े, पशु, स्त्री-पुरुषों का कल्याण कर्ता, पोषक देव, बाधक तत्वों को निकालने वाला, पाप शमन कर्ता है, लेकिन दूसरी ओर वह पूर्ण नियंत्रण के साथ शक्ति का प्रयोग विद्युतवत् करता है, धनुर्धारी है, वह जंगली पशु वाहन पर बैठता है, विनाशक और क्रोधी है। यजुर्वेद की शतरुद्रीय से भी प्रशस्ति में शिव में अनेकों प्रकार की महानताएं आरोपित की गयी हैं -- वह अनुकूल देव है, भयंकर नहीं है, वह दाता है, प्रथम दिव्य विज्ञानी है, वह लाल वर्ण और नीलकंठी है, उसके सैकड़ों नेत्र हैं, वह हजारों तरकश धारण करता है। दूसरी प्रशस्ति में वर्णित है -- त्र्यंबक, मोक्ष सुगंधित, पुष्टिवर्धक, गायों, घोड़ों, और मनुष्यों के लिए औषधि और भेड़ों के लिए मुक्ति दाता का प्रतीक।

अथर्ववेद में वह पुनः पशुओं का रक्षक है लेकिन उसका स्वभाव क्रोधी है। वह अंधकारपूर्ण, श्याम, विनाशी, और भयंकर है। वह क्रोधी देव है फिर भी प्रार्थना पर स्वयं को उन्हीं स्थानों पर सुलभ बना देता है। मानवों पर मात्र विध्वंस के लिए विष या दिव्य अग्नि से आक्रमण नहीं करता है।

ब्राह्मण ग्रंथों में वर्णित है कि रुद्र जब जन्मा तो उसने रुदन किया, उसके पिता प्रजापति ने रोने का कारण पूछा। उसने बतलाया नाम न प्राप्त करने के कारण। उसके पिता ने उसे रुद्र :रुद् के मूल से रोना: नाम दिया। इन्हीं ग्रंथों में कहा गया है कि देवगणों की प्रार्थना पर उसने प्रजापति का वध किया क्योंकि उसने अपनी पुत्री से निषेधित संभोग किया।

एक अन्य स्थल में कहा गया है कि उसने आठ बार अपने नाम करण के लिए अपने पिता से अनुरोध किया और इसीलिए उसे ये नाम मिले-- भव, शर्व, पशुपति, उग्रदेव, महादेव, रुद्र, ईशान, अशनि।

उपनिषदों में उसके चरित्र में और भी विकास होता है। वह प्रश्नकर्ता देवों से घोषित करता है -- मैं :सभी वस्तुओं के: पहले होता था, और मैं ही :उनमें: रहता हूँ, और मैं ही :शेष: रहूँगा। मुझसे महान और कोई नहीं है। मैं ही अनन्त हूँ और नहीं भी, वर्ण्य हूँ और अवर्ण्य भी। मैं ब्रह्म हूँ और नहीं भी।

पुनः यह भी कहा गया है -- केवल वही रुद्र, वही ईशान, वही दिव्य है, अन्य :देव के लिए इसमें: स्थान नहीं है। वह इस चतुर्थ जगत का शासन कर्ता है, नियंत्रण कर्ता और उत्पादक भी। जीवित प्राणी उसके साथ रहते हैं, उन्हें वह संयुक्त कर देता है। अन्त :समाप्ति: के समय, रक्षक होते हुए भी वह सम्पूर्ण संसार को नष्ट कर देता है।

वह बिना प्रारम्भ, मध्य, अन्तपूर्ण है। वह सर्वव्यापी है। वह उमा का पति है। वह त्रिनेत्री, नीलकंठी, शान्त महादेव है। वह आध्यात्मिक और कृपापूर्ण है। वह ब्रह्म, इन्द्र, विष्णु, शिव, सब से महान है। वह स्वयं कान्तिवान, स्वांत आत्मा, देवताओं का स्वामी है। जो है या जो था, और जो होगा --वही सब कुछ है। उसे समझ लेने के बाद मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेता है। इसके सिवा मोक्ष का कोई अन्य मार्ग नहीं है।

रामायण में शिव महादेव हैं, लेकिन इस विषयक जो भी प्रसंग हैं वे सर्वोच्च

वैदिक सत्ता की अपेक्षाकृत व्यक्तिगत देव रूप में अधिक है। वह विष्णु जैसे युद्ध में प्रतिनिधित्व करता है, और विष्णु, इन्द्र, ब्रह्मा के साथ पूजित होता है। लेकिन विष्णु का स्थान उससे कुछ उच्च है। यद्यपि इ में अनेक स्थलों पर शिव उच्चतम स्थान प्राप्त करते हैं और विष्णु द्वारा आभारित पूजित होते हैं। यह उसे महा-देव कहते हैं जो :महादेव: संपूर्ण दक्ष देव होते हुए भी दर्शनीय हैं। वह उनके ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र के अधिपति हैं। इन्हें देवगणों के अलावा ब्रह्मा से पिशाच तक पूजते हैं।

शिव और विष्णु सम्बन्धी प्रतिद्वंदिता का भाव इस काव्य में दृष्टिगोचर होता है। और बाद में पुराणों में अनेकों, विकसित और जो पूर्ववर्ती ग्रन्थों नहीं थीं शक्तियां शिव में जोड़ दी गयीं। शिव और विष्णु के उपासकों द्वारा इस संघर्ष के ऐक्य के लिये प्रयत्न किये गये --विष्णु, कृष्ण और शिव एक हैं। और बाद में जैसा कि हरिवंश पुराण में कहा गया है कि इनमें :इन देवों में: कोई भी भेद नहीं है, शिव विष्णु रूप में और विष्णु शिव रूप में विद्यमान हैं।

पुराणों में स्पष्ट रूप से उनके विशेष देवता की महानता प्रकट है, चाहे शिव हों या विष्णु। अपने विशेष देव के गौरव और सम्मान के प्रति उन्होंने अनेकों गुणों का आरोपण किया है--प्राचीन कृतियों और परम्परागत प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष गाथाओं, प्रसंगों, कहानियों द्वारा।

वेदों के रूप का विकास युगों में हिन्दू परम्परा से बढ़ कर महान, शक्तिशाली देव शिव, त्रिपुरारि, महादेव, धनुर्धारी के रूप में हुआ। वह संक्षिप्त में एक विध्वंस भी है, लेकिन निर्माण और कल्याण में उसकी शक्ति और अधिक योगदान है।

रुद्र या महाकाल के रूप में वह महान विनाशकर्ता, शक्ति को छिन्नभिन्न करने वाला है लेकिन विध्वंस के प्रति हिन्दू विश्वास है कि वह पुनर्निर्माण का प्रतीक है; इसी से शिव या शंकर कल्याणप्रद, वह पुनरुत्पादित शक्ति है जो निरन्तर विकास को संरक्षित करती है। इसी लिए वह ईश्वर और महादेव रूप से संबोधित किया गया है। वह :शिव: एकाकी और संयुक्त रूप दोनों में है, पुरुष

और स्त्री दोनों योनि के साथ है, वह सर्वत्र पूज्य है। वह महायोगी, महा तपी है जिसमें योगी का अपरोक्ष ध्यान और महानतम पूर्णता केन्द्रित है, और इसी के द्वारा अपरिमित, असीमित शक्ति प्राप्त की जाती है, जादू और चमत्कार कार्य करते हैं, सर्वोच्च आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति की जाती है, और महा आत्माओं के साथ संयुक्त रूप में ज्ञान की उपलब्धि होती है।

इस रूप में वह नग्न तपस्वी, दिगम्बर, धूर्जटि है, उसकी देह में राख मली हुई है। उसका प्रथम या विनाशक रूप कुछ अधिक गहन है, इसमें वह भैरव बनता है जो भयानक और विनाशक है और विनाश में आनन्द प्राप्त करता है। वह भूत और पिशाचों का स्वामी भूतेश्वर है। इस रूप में वह उजाड़ स्थानों और श्मशानों में निवास करता है, गले में सर्प धारण किये हुए, मुंडमाला पहने, भूत-पिशाचों के साथ वह कभी-कभी आनन्द में शोर-गुल करता है, और नशे में चूर, क्रोधित रूप में अपनी पत्नी देवी के साथ तांडव-नृत्य करता है, उसे भूत-पिशाच, दैत्य घेरे रहते हैं।

वह अनेकों योगदान वाला, शक्तिवान है। उसके अनेकों नाम हैं। करीबन १००८ नाम मिलते हैं किन्तु अधिकतर विशेषण हैं। शिव गौर वर्ण, पंचमुख और चतुर्भुज है। वह सामान्य रूप में गहन ध्यान में दर्शित किया जाता है। उसका तृतीय नेत्र मस्तक के मध्य में है, जटा लिपटी हुई ऊपर की ओर उठी होती है, जिसमें स्वर्ग पवित्र गंगा धारण का प्रतीक होता है। मुंडमाल रूप में गले में लटकते हैं। दो सर्प नाग कुंडल रूप में लटके रहते हैं, विषपान के कारण कंठ नीला है; यह विष संसार के लिए अत्यन्त विनाशकारी था अतः कल्याण के लिए उसका पान किया: हाथ में त्रिशूल या पिनाक रहता है,-- पोषाक कृत्तिवास हिरन, चीता या हाथी है। कभी-कभी वह चर्म धारण किये हुए चीते की खाल पर बैठते हैं। हाथ में हिरन भी कभी-कभी रहता है। सामान्य रूप में वह अपने बैल नन्दी के साथ रहता है। वह अजगव धनुष लिए रहता है। उसका सूचक रूप में डमरू और खट्वांग, जिसके छोर में मुंड है, रहता है। पापी व्यक्तियों के बन्धन के लिए पाश रहता है। उसके बहुत से प्रमथ, भूत-पिशाच हैं। उसका तृतीय नेत्र विनाशक है, इसी से काम जल कर भस्म हो गया था जो उसके तप के समय पार्वती को कामोत्तेजित के लिए आया था, इस

नेत्र के देखने से सभी नष्ट हो जाता है।

अनादर पूर्ण ब्रह्मा के वचनों के कारण शिव ने उसका एक शिर काट दिया था जिससे ब्रह्मा चतुर्मुखी हो गया।

विश्वेश्वर के रूप में बनारस में शिव का महान रूप है। उसका स्वर्ग कैलाश पर्वत है।

शिव के पुराणों में, विशेष कर शिव पुराण में ८ बड़े अवतार कहे गये हैं-- शिव, भव, शर्व, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान और महादेव। शिव के उक्त शर्व प्रभृति आठ रूपों में अधिष्ठित होने वाले भूमि, जल, अग्नि, पवन, अंतरिक्ष, क्षेत्रज्ञ, सूर्य और चन्द्र हैं।

शिव मंदिर का विश्वम्भर स्वरूप वाला रूप यह सम्पूर्ण चर-अचर संसार को धारण करता है। इस समस्त संसार को जीवन-दान देकर जीवित रखने वाला शिव जल के स्वरूपवाला भव रूप है। जो स्वयं बाहर-भीतर, सर्वत्र स्थित होकर इस संसार का पालनकर्ता और वाहक है उग्र रूप है। समुदाय का भेदन करने वाला सर्व व्यापक और सब को अवकाश प्रदान करने वाला आकाशात्मक भीम रूप है। पशु रूप जीवों के पाश छेदन करने वाला जो समस्त आत्माओं का अधिष्ठाता देव है तथा सम्पूर्ण क्षेत्रों की निवास भूमि है पशुपति रूप है। सूर्य के स्वरूप में रह कर जो सम्पूर्ण संसार को प्रकाश प्रदान करता है वह ईशान नाम वाला शिव का स्वरूप आकाश में फैला हुआ है। अमृतमयी किरणों के द्वारा समस्त जगत तृप्त एवं शीतल करता महादेव रूप है। परमात्मा शिव का आत्मा नाम वाला है जिसके मूर्त-अमूर्त सभी में व्याप्त होने के कारण यह सम्पूर्ण संसार शिव रूप मय है।

पुराणानुसार सृष्टि निर्माण के लिए ब्रह्मा ने कठोर तप किया जिसके फल-स्वरूप शिव ने अपनी काम प्रदायिनी मूर्ति में प्रवेश करते हुए अर्द्धनारीश्वर रूप में ब्रह्मा के समीप पदार्पण किया। शिव के अन्य अवतार हैं--कलियुग के अन्त में शिखा के साथ श्वेत मुनि रूप और उनके पुत्र श्वेत, श्वेताश्व, श्वेतलोहित और श्वेतशिख हैं। कलियुग में सुतार रूप में उनके शिष्य दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक, केतु हैं।

द्वापर में दमन रूप में उनके पुत्र विशोक, विकेश, विपाप, पापनाशन हैं। चतुर्थ द्वापर में सुहोत्र रूप में उनके पुत्र सुमुख, दुर्मुख, दुरतिक्रम, दुर्दम हैं। पंचम द्वापर में कंकरूप में उनके पुत्र सनक, सनातन, सनन्दन, सनत्कुमार हैं। षष्ठ द्वापर सत्य में लोकाक्षि रूप में उनके शिष्यगण सुधामा, संजय, विरजा, विजय हैं। सप्तम द्वापर में जैगीषव्य रूप में उनके पुत्र सारस्वत, योगीश, मेघवाहन, सुवाहन हैं। अष्टम् द्वापर में दधिवाहन रूप में उनके पुत्र कपिल, आसुरि, पंचशिख, शाल्वल हैं। नवम् द्वापर युग में ऋषभ रूप में उनके शिष्य पराशर, गर्ग, भार्गव, गिरीश हैं।

दैत्यों से पीड़ित इन्द्र आदि देवों की प्रार्थना पर शिव सुरभि के एकादश पुत्रों के रूप में उत्पन्न हुए-- कपाली, पिंगल, भीम, विरूपाक्ष, विलोहित, शास्ता, अहिर्बुध्न्य, शंभु, चण्ड, भव। शिव के अंश से अनुसूया के गर्भ से दुर्वासा उत्पन्न हुए। शिव ने [illegible] ब्रह्मचारी के रूप में भी अवतार लिया।

शिव के बारह अवतार प्रसिद्ध हैं-- हिमालय में केदारनाथ, डाकिनी में भीमशंकर काशी में विश्वनाथ, गौतमी नदी पर त्र्यम्बकेश्वर, सौराष्ट्र में सोमनाथ, श्री शैल में मल्लिकार्जुन, उज्जैनी में महाकालेश्वर, ओंकार में अमरनाथ, चिताभूमि में वैद्यनाथ, दारुकावन में नागेश्वर, सेतुबन्ध में रामेश्वरम्, शिवालय में घुश्मेश्वर।

'कारसदेव की गोटें' में शिव की प्रधानता है। जनता उन्हीं की पूजक, भक्त है। रहलादी के तप से प्रसन्न होकर शिव अपने अंश :अंशरूप में: दो भाइयों का वर देते हैं। लोक-मानस शिव को भारी बरदानी :बड़ा वर देने वाला: चमत्कारी कहते हैं। कारसदेव आदि उनके अंशावतार होते हुए भी उनके दरबार में गण रूप में रहते हैं और आने-जाने के सम्बन्ध में उन्हें कठोर नियमों का पालन करना पड़ता है। मान्धी के विवाह में शिव द्वारा निर्धारित चौथे दिन की अपेक्षा पांचवा दिन हो जाता है, अतः 'हरी दरबार' में उनके आने का मार्ग बन्द हो जाता है।

प्रस्तुत लोक-काव्य में शिव का स्वरूप ग्राम्य है। पौराणिक प्रभाव के स्थान पर लोक जीवन में व्याप्त परम्पराओं, गाथाओं, रूढ़ियों की प्रधानता है। कुल द्वारा शिव की दो भाइयों के रूप में अवतार की कल्पना प्रस्तुत लोक-काव्य की अपनी

मौलिक देन है। पौराणिक शिव सृष्टि के सर्जक, नियामक, पालक, संहारक, विचारपूर्ण गहन समाधि में लीन रहता है जबकि इसमें शिव सदैव 'चौपड़' खेलने में व्यस्त रहता है और तपस्या से संतुष्ट होकर वरदान स्वरूप कार्य की समाप्ति के तत्काल बाद सभी लोगों से सम्बन्ध-विच्छेद करके 'प्रायश्चित' के लिए हिमालय तप करने चल देता है। पुराणों में पार्वती, काली, शिवा, भवानी, उमा आदि को पत्नी के रूप में और गणेश, कार्तिकेय का पुत्र रूप में विशद वर्णन हुआ है जब कि प्रस्तुत लौकिक वीर-काव्य में इस प्रकार की पूर्ण उपेक्षा की गयी है।

:ख: देवी

प्रस्तुत लौकिक वीर काव्य में मानाधी की पतिव्रता पत्नी एकलादी को 'साक्षात भवानी के अवतार' रूप में सम्बोधित करती है। एकलादी में भवानी या देवी की तरह असुर बल, साहस, आत्म विश्वास है।

किन्तु पौराणिक देवी से एकलादी के चरित्र में सर्वथा भिन्नता है। पौराणिक भवानी का अवतार देवों के हित के लिए दैत्यों के वधार्थ होता है और वह अनेक प्रकार के दिव्य अस्त्र-शस्त्र से युक्त भयावह रूप, संहारकारिणी है। इस रूप में वह स्वतंत्र भी है जब कि एकलादी निःशस्त्र, सीधी-सादी, माता-पिता, भाइयों आदि पर निर्भर रहने वाली स्नेही, आशावादी, त्यागपूर्ण, सहनशील, उदार मेलजोल रखने वाली बहिन या कन्लापत बेटी की मां है। देवी की तरह वह स्वयं संहार करने या बदला नहीं लेती है। राजा गरूरकुवा द्वारा अपमानित होने पर वह शिव को तप से प्रसन्न करने के बाद 'उन्हीं जैसे दो भाइयों' की बदला लेने के हेतु याचना करती है। देवी और शिव का सम्बन्ध पति-पत्नी का है। यही पौराणिक प्रभाव के स्थान पर इस लौकिक वीर काव्य के रचयिता की मौलिकता प्रमाणित करता है। एकलादी सामान्य स्त्रियों की तरह भाइयों के तपस्वी बन जाने पर गांव-टोले में रोती-फिरती है और उसे कोई 'पूछता' तक नहीं है। अन्त में 'मेहल मामा' के यहां शरण लेकर वह अपनी बेटी कन्लापत का विवाह कार्य सम्पन्न करती है।

इस प्रकार पौराणिक 'देवी' से उसका स्वरूप नितान्त भिन्न और अत्यन्त 'मानवी' है। पौराणिक देवी भव्यता, अलौकिकता, दार्शनिकता, विचित्रता,

अवतार प्रयोजन के स्थान पर एक्लादी रूप में ग्राम्यता, सरलता, सामान्यता का प्राधान्य है ।

संभवतः अपूर्व बल के कारण एक्लादी को 'भवानी' रूप में संबोधित किया गया है ।

:ग: कृष्ण

कृष्ण :आंगिरस: का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में पाया जाता है । इन सन्दर्भों में कृष्ण एक स्तोता ऋषि हैं, वे तथा उनके पुत्र क्रमशः अपने पौत्र और पुत्र विश्वक-विष्णु को पुनः जीवन और आरोग्य देने के लिए अश्विनीकुमारों का आह्वान करते हैं । ऋग्वेद में एक कृष्णासुर का भी उल्लेख है, जिसे इन्द्र ने पराभूत किया था परन्तु महाभारत के वीर राजनीतिज्ञ कृष्ण के व्यक्तित्व से इनका इन प्राचीन सन्दर्भों में कोई समता नहीं मिलती है । छान्दोग्योपनिषद् के घोर अंगिरस के शिष्य कृष्ण देवकी पुत्र कहे गये हैं, जिन्हें गुरु से यज्ञ की सरल रीति प्राप्त हुई, जिसकी दक्षिणा थी तप, दान, आर्जव, अहिंसा और सत्य । महाभारत में शान्ति-पर्व में वासुदेव-कृष्ण की पूजा विधि बताते हुये जिस वैष्णव-यज्ञ का प्रतिपादन किया गया है, उससे उपनिषद् के इस सन्दर्भ का सरलता से सामंजस्य हो जाता है । घत जातक और महाउमग्ग जातकों में भी कण्ह वासुदेव की क्रमशः एक पूरी कथा तथा संक्षिप्त उल्लेख मिलता है, जिसका थोड़ा-बहुत साम्य भागवत में वर्णित प्रसिद्ध कृष्ण-कथा से दिखाया जा सकता है । हरिवंश, विष्णु, भागवत, ब्रह्मवैवर्त आदि अनेक पुराणों में कृष्ण की कथा को अधिकाधिक महत्व मिला है, परन्तु इनमें भागवत की कृष्ण-कथा ही सबसे अधिक विस्तृत और सांगोपांग तथा व्यवस्थित कही जा सकती है । ऐसा लगता है कृष्ण की कथा मौखिक रूप में लोक प्रचलित थी । पुराणों में उसका धीरे-धीरे धार्मिक रूपक की भांति उपयोग होने लग गया, जो क्रमशः बढ़ता चला गया और कवियों की कल्पना उसमें नये-नये प्रसंग और सन्दर्भ जोड़ती चली गयी । कृष्ण की कथा कल्पना के लिये सबसे अधिक उर्वर क्षेत्र रही है ।

कृष्ण के तीन रूप हमारे सामने आते हैं --

१- योगी, धर्मात्मा का रूप -- जिसकी गीता के कृष्ण में चरम परिणति

मिलती है। ~~मिलती-है-~~ कृष्ण अर्जुन को दार्शनिक उपदेश देते हैं।

२- ललित मधुर गोपाल का रूप -- संस्कृत-साहित्य में जिसकी चरम परि- ~~परिणति~~ णति श्रीमद्भागवत, पद्म और ब्रह्मवैवर्त पुराण में हुई है। कृष्ण देवकी के पुत्र हैं किन्तु कंस के अत्याचार के कारण नन्द-यशोदा के यहाँ पाले जाते हैं, जहाँ उनके भाई बलराम भी हैं। बचपन से ही कृष्ण चंचल, मोहक, नटखट, अद्भुत कृत्यों के करने वाले हैं। यशोदा उन्हें पुत्र रूप में पाकर फूली नहीं समाती हैं। बाल्यावस्था में कृष्ण पूतना, तृणावर्त, केशी, धेनुक, बकासुर, अघासुर आदि आदि कंस द्वारा उन्हें मारने के लिये भेजे गये दैत्यों का वध करते हैं। कालिय-नाग को यमुना से निकाल कर उसे पेय-योग्य जल बनाते हैं। इन्द्र के कोप से गोवर्धन पर्वत को धारण करके ब्रज की रक्षा करते हैं। माखन-चोरी, चीर-हरण तथा अनेक शरारतों से कृष्ण गोपियों के मन में बस जाते हैं। राधा उनकी सबसे अधिक प्रिय गोपी है। वंशी वादन में कृष्ण अद्वितीय हैं, केवल इसके द्वारा वह पशु-पक्षी, नर-नारी, जड़-चेतन सभी को मंत्र मुग्ध कर देते हैं। रास रचा कर वह गोपियों की मनोकामना को पूरी करते हैं। इसके बाद कंस के निमंत्रण ~~ष~~ पर उसके राज्य में जाकर उसके प्रसिद्ध हाथी और मल्ल युद्ध में चाणूर मुष्टिक आदि अनेक पहलवानों का बलराम के साथ वध करते हैं और अन्त में कंस का भी वध करके माता-पिता को स्वतंत्र कराते हैं। इसके बाद कृष्ण द्वारका के राजा बनते हैं। उनके अनेक विवाह होते हैं और पुत्र भी।

३- वीर राजनयिक का रूप -- जो महाभारत और पुराणों में सन्धि-विग्रह संबंधी प्रसंगों में प्रकट हुआ है।

ये रूप मनुष्य के ज्ञान, राग, कर्म की ~~इन~~ तीन प्रधान मानसिक वृत्तियों के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। ये तीनों रूप यद्यपि प्राचीन जान पड़ते हैं और बाह्यतः असंगत लगते हुए भी उनमें एकसूत्रता देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए कृष्ण के व्यक्तित्व की सबसे प्रमुख विशेषता -- निस्संगता या तटस्थता -- व्यक्तित्व की सबसे प्रमुख-विशेषता ~~ह~~ वृत्ति समान रूप से उनके सभी रूपों में मिलती है और ध्यान से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसी वृत्ति की यानी जीवन के इन तीन विभिन्न पक्षों को उदाहृत करने के लिये इन तीन रूपों की अवतारणा हुई है।

परन्तु ये तीनों रूप कृष्ण के उस दैवत रूप से ही अधीन विकसित हुए, जो अत्यन्त प्राचीन काल से इष्ट देवता वासुदेव कृष्ण के रूप में लोकप्रिय होता आया था । इस दैवत रूप की परिणति अन्ततोगत्वा साक्षात परब्रह्म में हुई । ऐसा प्रतीत होता है इष्ट देव वासुदेव कृष्ण की प्रमुख विशेषता उनका सौन्दर्य और माधुर्य ही था, और इसी रूप में वे वृष्णिवंशीय सात्वत जाति के कुलदेव माने जाते थे । मौखिक रूप में ललित, मधुर, गोपालकृष्ण की कथायें अवश्य प्रचलित रही होंगी जो गाथा-सप्तशती, ध्वन्यालोक, हर्षचरित; तथा मूर्तिकला और शिलालेखों -- जो मुण्डी, देवगढ़, नानाघाट, प्राकी अभिलेखों आदि में यदा-कदा आभासित हो जाती है । परन्तु पुराणों ने इन कथाओं को बहुत धीरे-धीरे अपनाया । प्राचीन पुराणों में केवल भागवत में गोपाल कृष्ण की कथा सम्यक रूप से वर्णित की गयी, परन्तु उसमें भी राधा का नामोल्लेख तक नहीं हुआ । पद्म पुराण और उससे अधिक ब्रह्मवैवर्त पुराण में ही राधा कृष्ण की प्रेम-गर्भित कथा विस्तार से दी गयी है । परन्तु लोक-साहित्य, गीत और कथाओं में कृष्ण के असंख्य आख्यान चलते रहे होंगे, यह बात मध्य काल में निर्मित देश भाषा काव्य से प्रमाणित होती है ।

कारसदेव में और मीरा के लिये कृष्ण के पर्याय नाम कन्हैया, डावरो, जवांदी का प्रयोग किया गया है । सूरपाल मुरली बजाकर राजा गल्हकूवा के पशुओं को मोहित कर लेता है । कारस सूरपाल के सर्प दंशित होने पर नाग के घर में जाकर, उसे पराजित करने के बाद विषपान द्वारा भाई को पुनर्जीवित करने को विवश करता है ।

केवल कृष्ण की ख्याति मुरली वादक के और कालिय नाग-मंथन के रूप में इस प्रकार की है । अतः 'कारसदेव की गोटें : लौकिक वीर काव्य' पर पौराणिक प्रभाव की कल्पना की जा सकती है, किन्तु यह सर्वथा सत्य नहीं है ।

यद्यपि पुराणों में कृष्ण को अद्वितीय मुरली वादक कहा गया है, उनके मुरली वादन से नर-नारी, जड़-चेतन, पशु-पक्षी सभी मोहित हो जाते हैं, उनके मुरलीवादन- और सूरपाल की मुरली में भी मुरली बजाकर पशुओं को मोहित करते हैं, किन्तु कृष्ण और सूरपाल की मुरली में भिन्नता है --

कृष्ण की मुरली बांस की बनी वाद्ययंत्र थी जबकि सुरपाल की मुरली एक पक्षी है और पिंजड़े में बन्द रहती है। पिंजड़े में मुक्त होकर नहीं रहती है। सुरपाल की मुरली जासूस, दूत का भी काम करती है। वह सुरपाल को शत्रु के सम्बन्ध में सूचना सलाह देती है। सुरपाल के संकटग्रस्त होने पर वह अपनी चोंच से पिंजड़े से मुक्त होकर निकल कर, घोड़े के भी बन्धन को काटती है, और रात-दिन उड़कर, किंचित मात्र भोजन करके कारस की सहायता के लिये अपने पंखों के बीच में बैठा कर लाती है --

'उड़ी मुरलिया आसमान कों सरग में करी अन्धारा हो
रावन भागे मुरलिया बीच मग करे विसराम
और रावन छोड़ी सुध निंदिया मुरलिया बिन के भोजन परवाहा हो...'

'हां हां आज सबरीदा कौन बन था वो तारा फांक हों
वा से मैंने पिंजरन की काटी सुनाइ सीख.....'

'मैं पंछी कहिये ऊधा बन फाड़ी कर- र जाय'

कारस सूक्ष्म रूप धारण करके मुरली के पंखों में समा जाते हैं --

'हां हां और बन जावो मैं मुरलिया मैंदा क्यारी फूला हो
हो रे पखउमन में मुरलिया जाऊं समाय....'

इस प्रकार कृष्ण और कारस की मुरली में पर्याप्त भिन्नता है। वास्तव में प्राचीन काल से लोग-बाग तोतिया आकर्षक आकर्षक, मधुर स्वर करने वाले पक्षी को साथ में रखते थे, यात्रा, युद्ध तथा शिकार आदि में भी। पक्षी का काफी प्रभाव भी रहते थे। संभवतः मुरली पक्षी में कोयल के स्वर की मधुरता, भोलता, भावुकता का आरोपण करके प्रस्तुत लोकिक वीर काव्यकार ने कल्पना की अतिरंजना से प्रस्तुत प्रसंग की कल्पना की है।

पुराणों में कालिय नाग के कारण यमुना के विषाक्त जल पान से ग्वाल-बाल, पशु मृत हो जाते हैं। कृष्ण यमुना में कूद कर कालिय नाग को परास्त करता है, उसके सहस्र फणों पर नृत्य करके मानव मानमर्दन करता है और अन्त में नाग-पत्नियों तथा नाग की प्रार्थना पर उसे क्षमादान देता है। नाग के मस्तक पर अपने

चरण-चिन्ह अंकित करके उसे समुद्र में जाने का आदेश देता है। 'चरण-चिन्ह के कारण गरुड़ आक्रमण नहीं करेगा,' यह यह आश्वासन देता है, और अन्त में ग्वाल-बालों और पशुओं को अपने प्रभाव से जीवित कर देता है।

प्रस्तुत लोक-काव्य में सुख-निद्रा में निमग्न सूरपाल को पृथ्वी पाताल लोक से निकल कर नाग डंसता है। विष के प्रभाव से सूरपाल मर जाता है। कारस पुरुष रूप धारण करके पृथ्वी पाताल लोक में प्रवेश करके सर्प को जगाता है। क्रुद्ध सर्प की फुफकार से गौरवर्णी कारस कृष्ण वर्णी हो जाते हैं। वह बड़े कौशल से सर्प का मुंह पकड़ कर उसे विवश कर देता है और भाई को पुनर्जीवित करने के लिये कहता है, साथ में सर्प से चार प्रतिज्ञायें भी कराता है -- अनाथ पीसती नारी, दूध बांधे बछड़ों को कभी भी मत काटना, खाट पर विश्राम मत करना तथा घर की देव देहरी मत लांघना। सर्प के कहने के अनुसार दूध की मांदे भर दी जाती हैं और सर्प सूरपाल के तलवे से विष निकाल कर उसमें डालता है, सूरपाल पुनर्जीवित हो जाता है। सर्प को परास्त करने से पूर्व कारस कनफड़े जादूगर :सपेरों: की मदद लेता है, क्योंकि उनकी प्रसिद्धि है वे बीन और जादू द्वारा सर्प को बुलाकर उससे विष निकलवा देते हैं, किन्तु इस बार वे असफल प्रमाणित होते हैं।

अतः पौराणिक कालिय नाग-मंथन से इस प्रसंग की भिन्नता स्पष्ट है।

:२: <u>लोक प्रभाव</u>

कारस देव मदिन के अपमान का बदला राजा गरूरढ़ा से युक्तिपूर्ण ढंग से लेते हैं। बिना रक्त-पात किये, चमत्कार से मोती की वर्षा करके सेना को लौटवा देते हैं और गरूरढ़ा का संपूर्ण पशुधन ले लेते हैं। राजा गरूरढ़ा के दमाद को भी बिना रक्तपात किये चमत्कार से पराजित किया जाता है। सूरपाल दंशित सर्प को कारस उसका वध न करके उसे विषपान को विवश करता है। गरूरढ़ा के चरागाह में चरते पशु को सूरपाल मंत्रमुग्ध करके अपने साथ ले लेता है, किन्तु उनके दूध पीते बछड़े-बछियां घर में ही रह जाते हैं, फलस्वरूप वे तड़फ-तड़फ कर मर जाते हैं। इस अनजाने पाप का प्रायश्चित्त कारसदेव हिमालय पर जाकर तप से करते हैं।

लेकिन इस आधार पर बौद्ध प्रभाव भी समझना उचित नहीं है। स्पष्ट रूप से कारख देव शिव के अंशावतार हैं। रत्नावती के तप से संतुष्ट होकर 'अपने जैसे दो भाइयों' का उसे वर देते हैं और अनेक स्थानों पर कारख देव इसका उल्लेख करते हैं। कारखदेव अपने पाप का प्रायश्चित परंपरागत धार्मिक, अविध पवित्र शिव के स्थान पर शिव के दरबार हिमालय पर जाकर करते हैं, और 'निर्वाण' आदि के स्थान पर शिव के दरबार में स्थान प्राप्त करते हैं। बौद्ध धर्म अवतारवाद के प्रति सर्वथा उदासीन है जबकि कारखदेव अपने अवतार के प्रति सदैव सतर्क हैं।

कारख सदैव शस्त्र समीप रख कर शयन करते हैं। राजा गन्धकुड़ा के चरवाहों से गायें छीन कर मारपीट कर खुरपाल भगा देता है। खुरपाल क्वारिन की गुप्त मदि-मदिरा का ~~प्रेम~~ से पान करके उसे तंग करता है। गन्धकुड़ा की पुत्री का अपहरण करने के लिये खुरपाल अनेक तरह का झूठ और चमत्कार दिखलाता है। कनफड़े जब जादू और मन्त्र द्वारा सर्प निकालने में असमर्थ रहते हैं, तब क्रुद्ध कारख उनको मार-पीट कर, उनकी कौली-झंडा छीन कर भगा देता है। ये सभी बातें बौद्ध धर्म के मौलिक अहिंसा, सत्य, त्याग आदि सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं। पुनः प्रस्तुत लोक-काव्य में कहीं भी बुद्ध के प्रति श्रद्धा या बौद्ध धर्म, किसी भी बौद्ध का उल्लेख भी नहीं होता है। रत्नावती नदी में देवताओं में मात्र बालाजी, सूर्य और शिव को ही श्रद्धा रूप में जल चढ़ाती है।

वास्तव में 'कारख देव की गोटें : लौकिक वीर काव्य' अत्यन्त प्राचीन, मौखिक परम्परा में चला आ रहा नितान्त ग्राम्य, मौलिक, मुक्त शैली का लोक वीर काव्य है, जिसमें वेद, पुराण, बौद्ध आदि साहित्यिक ग्रन्थों का कुछ भी प्रभाव नहीं है।

--0--